جولائی ۲۰۱۲ء

ماہنامہ شعاع عمل لکھنؤ

قَالَ اللّٰہُ تبارک وتعالیٰ قَدْ جَاءَ کُمْ مِنَ اللّٰہِ نُورٌ وَکِتَابٌ مُبِینٌ

بے شک تمہارے پاس اللہ کی طرف سے نور آیا ہے اور روشن کتاب





نورہدایت فاؤنڈیشن، حسینیۂ غفرانمآبؒ، چوک، لکھنؤ-۳

R.N.I. No. UPBIL/2004/13526
Postel Regd.No. SSP/LW/NP-75/2011-13 Dispatch Date: 2 & 6 of Every Month

SHUA-E-AMAL
Lucknow

शुआ-ए-अमल
हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका लखनऊ

July 2012





NOOR-E-HIDAYAT FOUNDATION

Imambara Ghufran Maab, Chowk, Lucknow-3 (U.P.) INDIA, Ph.:0522-2252230

बिस्मेही तआला

वर्ष 9 — अंक 1

न्यास संस्थापन

15 जमादिलऊला 1424 हि० / 16 जुलाई 2003 ई०

पत्रिका विमोचन

15 जमादिलऊला 1425 हि० / जुलाई 2004 ई०

पर्यवेक्षक:
मु० र० आबिद,

सलाहकार समिति

- प्रोफ़ेसर अल्लामा अली मुहम्मद नक़वी, अलीगढ़
- डॉ० महदी ख़्वाजा पीरी, ईरान
- सै० हसन अब्बास नक़वी, मुम्बई
- मौलाना हसन ज़फ़र नक़वी, कराची
- प्रोफ़ेसर हुसैन कमालुद्दीन अकबर, इलाहाबाद
- कैप्टन सिकन्दर रिज़वी, लखनऊ
- सै० अहमद अब्बास नक़वी, मुम्बई
- शायरे अहलेबैत रज़ा सिरसिवी, सिरसी
- सै० सैफ़ रज़ी नक़वी, दिल्ली
- मुज़फ्फर आलिम, हुसैनाबाद, लखनऊ

नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन की

इस्लामी, ज्ञान व शोध

हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका

जुलाई 2012

शुआ-ए-अमल

"लखनऊ"

संरक्षक

क़ाएदे मिल्लत मौलाना सै. **कल्बे जवाद** नक़वी साहब

सम्पादक

सै. मुस्तफ़ा हुसैन नक़वी 'असीफ़' जायसी

उप-सम्पादक

क़ायम महदी नक़वी 'तहज़ीब' नगरौरी

सै० आसिफ़ अब्बास नौगांवी, हैदर अब्बास रिज़वी

मिलने का पता

नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन

इमामबाड़ा हज़रत ग़ुफ़रानमआब, मौलाना कल्बे हुसैन रोड, चौक, लखनऊ - 3

Phone No: 0522-2252230 Mobile No: 09335276180 — 09335996808

Per Copy 20/-

Annual 200/-

सम्पादन समिति


- डॉ० अमानत हुसैन नक़वी
- वासिफ़ अहमद नक़वी 'समीर'
- मिर्ज़ा हुमायूँ क़दर
- डॉ० आरिफ़ अब्बास
- बिन्ते ज़हरा 'नदल हिन्दी'

▼▼▼

R.N.I. No.
UPBIL/2004/13526

▼▼▼

Postal Regd. No.
SSP/LW/NP-75/2008-10

●●●

WEBSITE:
www.noorehidayatfoundation.com
www.al-ijtihaad.com

●●●

E_mail:
noorehidayat@yahoo.com
noorehidayat@gmail.com

वार्षिक अंशदान

1- यूरोप, अमरीका, कनाडाः
80 अमरीकी डालर
2- ख़लीजी मुमालिकः
60 अमरीकी डालर
3- एशिया, पाकिस्तानः
40 अमरीकी डालर
4- पाकिस्तान ज़मीनी डाकः
20 अमरीकी डालर

लाइफ़ मेम्बरशिपः 4000/-

विषय सूची

जूलाई 2012ई०
शाबान 1433हि०





नमाज़

आयतुल्लाहिलउज़्मा सैय्यिदुलउलमा सै० अली नक़ी नक़वी ताबा सराह
सम्पादनः नूरे हिदायत फ़ाउन्डेशन, अनुवादकः बाक़र रज़ा ख़ाँ (ख़ाज़िन इमामिया मिशन)

मज़हबे इस्लाम के जो हुक्म है उनमें सबसे ज़्यादा खुसूसियत "नमाज़" ही है यूँ तो इस्लाम का मक़सद यह है कि बन्दा अपने ख़ालिक़ को (पैदा करने वाले) किसी वक़्त भी न भूले। यही हर वक़्त अल्लाह को याद करना ही फ़र्ज़ का एहसास पैदा करता है या याद दिलाता है मगर इस याद के निशानी के तौर पर जो ख़ास इबादत क़ानूने इस्लाम मे वाजिब की गई उस का नाम नमाज़ है।

नमाज़ के वक़्त (समय)

नमाज़ के समयों को चौबीस घण्टों में इस तरह बांटा गया है कि इन्सान अपने जीवन की आवश्यकताओं को भी पूरा करता रहे और ज़रूरतों की लगन में अल्लाह को भी न भुलाए ओर इसी तरह पूरा जीवन इस ध्यान के साथ गुज़ारे कि वह एक बड़ी शक्ति की देख रेख में है जो कि ज़रा भी गुमराही पसन्द नहीं करता। यही ध्यान अगर मज़बूती के साथ हर वक़्त क़ायम रहे तो इन्सान को गुनाह से रोकता है जैसा कि क़ुर्आन में लिखा है।

"इन्नस्सलाता तन्हा अनिल फ़हशाए वल मुन्कर" नमाज़ हर गुनाह और बुराई से रोकने वाली चीज़ है।
पाँच वक़्तों की नमाज़

इन्हीं समयों के अनुसार रात और दिन में पाँच नमाज़ें तय की गयी हैं:

१. **सुबहः** इसका समय सुबह की सफ़ेदी ज़ाहिर होने के बाद सूरज निकलने तक। इस नमाज़ को पाबन्दी से पढ़ने से आराम पसन्दी ख़त्म होती है और दिन का कोई हिस्स बेकार नहीं जाता।
२. **ज़ोहरः** दोपहर को जब दिन ढलने लगता है उस समय से इसका वक़्त शुरू होता है।
३. **अस्रः** ज़ुहर की नमाज़ के बाद अस्र का समय है, मग़रिब तक रहता है।
४. **मग़रिबः** सूरज डूबने के बाद जब पूरब की तरफ रात की स्याही फैल जाये।
५. **इशाः** मग़रिब के बाद से आधी रात तक।

रकात

जब से नमाज़ में खड़े हुए और जो कुछ पढ़ना है वह पढ़ा, उस समय से रुकू (घुटनों पर हाथ रखकर झुकना) और दो सिजदे करने तक को धर्म की भाषा में 'रकात' कहा जाता है।

वाजिब नमाज़ों मे सिर्फ़ पहली यानी सुबह की नमाज़ दो 'रकात' मग़रिब की तीन 'रकात' बाक़ी सब यानी ज़ुहर, अस्र और इशा चार-चार 'रकात' है।

जिस नमाज़ में जितनी रकातें हैं, उतनी ही तादाद में रुकू होते हैं और इसकी दोगुनी संख्या में सिजदे (सर झुकाना) होते हैं।

तहारत (पवित्रता)

नमाज़ की हालत मे आदमी का बदन और कपड़े पाक (पवित्र) होना चाहिए। इसमें किसी प्रकार की नजासत (अपवित्रता) नहीं होना चाहिए और फिर इसके बाद नमाज़ के पहले वज़ू और विशेष (कुछ) हालतों मे ग़ुस्ल (नहाना) और इन दोनों के करने मे मजबूरी की हालत मे तयम्मुम करना होता है।

वज़ु क्या है? अल्लाह की मर्ज़ी की नीयत (ध्यान) से मुंह और दोनों हाथों की कोहनियों से उंगलियों की नोकों तक पानी से धोना और सर के आगे के हिस्से पर और पैरों पर गट्टों तक भीगे हाथ का फेरना।

ग़ुस्ल (नहाना)

अल्लाह की मर्ज़ी की नीयत से इस तरह नहाना कि पहले सर और गरदन को धोए फिर बदन का दाहिना हिस्सा और फिर बायाँ हिस्सा या नीयत के साथ एक ही बार में किसी नहर इत्यादि में ग़ोता लगा लेना ग़ुस्ल कहलाता है। और तयम्मुम वज़ू और ग़ुस्ल न कर सकने पर वाजिब होता है। नीयत के साथ मिट्टी से पेशानी (माथा) की ओर हाथों की पुश्त (हथेली के पीछे) पर हाथ फेरना।

क़िब्ला

नमाज़ के समय हर मुसलमान को वह जहाँ भी है काबे की ओर मुंह करना ज़रूरी है। यह इस्लामी

संगठन का एक शक्तिशाली चिन्ह है, इसी को क़िब्ला कहते हैं।

लिबास (वस्त्र)

मर्द के लिये बिल्कुल नंगे बदन से और औरत के लिए चेहरा (मुंह) और दोनों हाथों के अलावा सारे बदन को छिपाये बग़ैर नमाज़ सही नहीं है। अकेले या अंधेरे इत्यादि में भी नमाज़ के लिए इतना पहनना आवश्यक है।

अज़ान

नमाज़ के लिए लोगों को ख़बर देने के लिए अज़ान का हुक्म है। इसकी तरकीब यह है कि ऊँची आवाज़ से चार बार "अल्लाहो अकबर" (अल्लाह सबसे बड़ा है), दो बार "अशहदो अन-ला इलाहा इल्लल्लाह" (मैं इक़रार/स्वीकार करता हूँ कि अल्लाह के अलावा कोई सच्चा माबूद/ईश्वर नहीं।), दो बार "अशहदो अन्ना मुहम्मदर रसूलुल्लाह" (मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद स० अल्लाह के सच्चे पैग़म्बर हैं।) इसके बाद दो बार ईमान का जुज़ (हिस्सा) होने की वजह से कहा जाता है "अशहदो अन्ना अमीरुल मोमिनीना अलीय्यन वलीउल्लाहे वसीयो रसूलिल्लाहे व ख़लीफ़तहू बिला फ़स्ल" (मैं इक़रार/स्वीकार करता हूँ की हज़रत अमीरिल मोमिनीन अली इब्ने अबी तालिब स० अल्लाह के वली/ दोस्त और खुदा के रसूल के वसी/सहायक और बिला वास्ता जानशीन/उत्तराधिकारी हैं।), दो बार "हय्या अलस्सला" (नमाज़ के लिए तैयार हो), दो बार "हय्या अललफ़लाह" (दीन/धर्म और दुनिया की भलाई हासिल करने चल पड़ो), दो बार "हय्या अला ख़ैरिल अमल" (सबसे बड़े नेक अमल/कर्म के लिए आगे बढ़ो), दो बार "अल्लाहो अकबर" (अल्लाह सबसे बड़ा है।) और दो बार "ला इलाहा इल्लल्लाह" (कोई सच्चा खुदा नहीं है सिवा अल्लाह के।)

नक़्क़ारा, भोंपू और सीटी वग़ैरा जितने तरीक़े दुनिया में ईजाद हैं, उन सबसे इस एलान के तरीक़े को बरतरी हासिल है। इसमें एक आवाज़ ही नहीं बल्कि पूरा संदेश है जो इस्लाम धर्म का विशेष लक्ष्य है।

अक़ामत

नमाज़ में खड़े होने के समय जमात (पंक्ति) में नमाज़ियों को नमाज़ के लिए बुलाने का या स्वयं अकेले अपने ध्यान को पूरी तरह लगाने के लिए अक़ामत का हुक्म है। इसके अधिकतर शब्द अज़ान से मिलते हुए हैं। शुरू में अल्लाहो अकबर चार बार के बजाये दो बार है और हय्या अला ख़ैरिल अमल के बाद दो बार क़दक़ा मतिस्सलाह (नमाज़ शुरू हो गई) है, और आख़िर में लाइलाहा इल्लल्लाह दो के बजाये एक बार है।

नीयत (इरादा)

दूसरे अन्य धर्मों में इबादत ज्ञान और ध्यान से सम्बन्ध रखती है। इस्लाम चूँकि रूह/आत्मा के साथ जिस्म/शरीर को भी इबादत में शामिल रखता है इसलिए यहाँ शरीर के कुछ अंगो को भी काम करना पड़ता है। मगर इनमें नीयत अर्थात इस काम की सब विशेषताओं के साथ अल्लाह की मर्ज़ी की ख़ातिर करना ज़रूरी है इस तरह इसमें शरीर के अंगो के साथ दिल और दिमाग़ भी अनिवार्य तौर पर शामिल हो जाते हैं। इबादत बिना नीयत के सही नहीं हो सकती।

तकबीरतुल अहराम

क़िब्ले (काबे) की ओर सीधे खड़े होकर नीयत के साथ दोनों हाथ उठा कर कानों तक ले जायें और इस इरादे से कि इन शब्दों के साथ नमाज़ शुरू हो रही है कहेः "अल्लाहो अकबर" (अल्लाह सबसे बड़ा है) यह नमाज़ का पहला रुक्न (अंग) है। इसके जानबूझ कर या न जानने की वजह से न कहने पर नमाज़ बरबाद हो जाती है।

क़िरात (पढ़ना)

इसके बाद अलहम्द का सूरा पढ़ेंः

बिस्मिल्लाहिर्रमार्निरहीम

"अलहम्दो लिल्लाहे रब्बिल आलमीन अर्रहमानिर रहीम मालिक यौमिद्दीन इय्याका नाबुदो व इय्याका नस्तईन एह दिनस्सिरातल मुस्तक़ीमा सिरातल लज़ीना अन अम्ता अलैहिम ग़ैरिल मग़ज़ूबे अलैहिम वलज़्ज़ालीन"

अर्थात मदद से अल्लाह की जो बड़ी रहमत वाला, बहुत रहम(दया) करने वाला है। हर तरह की तारीफ़ अल्लाह के लिए है जो सब दुनियाओं का पालने वाला (परवरदीगार) है। वह जो बड़ी रहमत वाला है। वह जो हिसाब किताब के दिन का मालिक है। (इसे एक सिपास समझना चाहिए जिसे बन्दा अपने मालिक के दरबार में आने के बाद पेश कर रहा है) तेरी ही इबादत

करते हैं और तुझ ही से मदद मांगते हैं। हमें सीधे रास्ते पर चला उनका रास्ता जिन पर तूने रहमत की, उनका नहीं जिन पर तेरा ग़ज़ब (प्रकोप) नाज़िल हुआ और न उनका जो रास्ते से भटके हुए हैं।

(अर्थ को दिमाग़ में रखें, नमाज़ में तरजुमे का पढ़ना ठीक नहीं है।)

सूरे अलहम्द के बाद कोई दूसरा सूरा पढ़ना चाहिए। बस वह चार सूरे न पढ़े जिनमें सिजदा वाजिब है और बेहतर यह है कि सूरे फ़लक़, सूरे नास, अलमनश्रा, वज़्ज़ोहा, लायात और सूरे फ़ील भी न पढ़ें।

अधिकतर इस रकात में सूरे इन्ना अन्ज़लना पढ़ा जाता है जो नीचे लिखी है।

बिस्मिल्लाहिर्रमार्निरहीम

इन्ना अन्ज़लनाहो फ़ी लैलतिल क़द्र व मा अदराका मालैलतुल क़द्र लैलतुल क़द्रे ख़ैरुन मिनअलफ़िशहर तनज़्ज़लुल मलायकतो वर रुहो फ़ीहा व इज़्ज़ने रब्बेहिम मिन कुल्ले अम्र सलामुन हिया हत्ता मत ल इल फ़ज्र। अर्थः मदद से अल्लाह की जो बड़ी रहमत वाला बहुत रहम करने वाला है। हमने उसे क़द्र की रात मे उतारा तुम्हें क्या ख़बर कि क़द्र की रात क्या चीज़ है। क़द्र की रात हज़ार महीने से बढ़ कर है फ़रिश्ते और रुहुल कुदुस इस में अपन पालने वाले के हुक्म से उतरते हैं वह हर बात से सलामती का ज़रिया है सुबहा होने तक।

रुकू

सूरे हम्द और दूसरे सूरे के पढ़ने के बाद तकबीर यानी अल्लाहो अकबर कहे फिर रुकू यानी इतना झुक जाये कि दोनों हाथो की हथेलियाँ घुटनों के ऊपर पंहुच जायें फिर तीन बार सुब्हानअल्लाह (हर बुराई से दूर है अल्लाह) या एक बार सुब्हाना रब्बिल अज़ीमे व बेहमदे (हर बुराई से दूर है मेरा पालने वाला जो बड़ी अज़मत वाला है और उसी के लिये हर तारीफ़ है।) कहे। अच्छा यह है कि सुब्हाना रब्बिल अज़ीमे व बेहमदे को कम से कम तीन बार कहे।

रुकू के बाद फिर खड़ा होना

रुकू के बाद सीधा खड़ा हो और (सुन्नत) यह है कि इसी हालत में कहे समे अल्लाहो ले मन हमेदा (अल्लाह सुनता है उसकी जो उसकी तारीफ़ करे।) यह उस ख़्याल का दोहराना है कि नमाज़ में बन्दा अपने पैदा करने वाले के दरबार में हाज़िर है यह उसे नहीं देखता न सही वह तो इसे देख रहा है और उसकी बातों को सुन रहा है। यही ख़्याल जितना ज़्यादा हो उतना ही नमाज़ में ध्यान रहता है इसके बाद झुके और माथा ज़मीन पर रखे इस तरह कि माथे के अलाा दोनों हाथों के नीचे और दोनों घुटनों और दोनों पैरों के अंगूठे भी ज़मीन पर टिके हुए हों।

माथे के नीचे ज़मीन का कोई हिस्सा हो या ऐसी चीज़ जो ज़मीन से उगती है जैस लकड़ी या पत्ता मगर शर्त यह है कि वह पहनने और खाने की चीज़ न हो।

सिजदे की हालत मे रुकू की तरह दो या तीन बार सुब्हान अल्लाहे कहे या एक बार सुब्हाना रब्बिल आला व बेहम्दे।

पहले सज्दे के बाद सिर उठा कर सीधा बैठे अल्लाहो अकबर कहे और अस्तग़फिरुल्लाहा रब्बी अतूबो इलैहे (मैं क्षमा चाहता हूँ अपने अल्लाह से और उसके दरबार में तौबा करता हूँ)।

इसके बाद अल्लाहो अकबर कह कर पहले सज्दे की तरह दूसरा सज्दा करे और इसके बाद सर उठाये। यहाँ पर पहली रकात समाप्त हो जाती है

दूसरी रकात और उसका पढ़ना

अब दूसरी रकात के लिए बे हौलिल्लाहे व कूव्वते ही अकूमों अक्ऊद कहे (अर्थात अल्लाह ही की दी हुई शक्ति से खड़ा होता और बैठता हूँ) फिर सीधा खड़ा हो और पहली रकात की तरह सूरह हम्द आर कोई दूसरा सूरह उन्हीं शर्तो के साथ जिनका बयान पहले हो चुका है पढ़े। बेहतर यह है कि सूरह कुल हो वल्लाह पढ़े जो नीच दिया है। यह सूरह कुरआन के सूरों में सबस बढ़कर है।

बिस्मिल्लाहिर्रमार्निरहीम

कुलहो वल्लाहो अहद अल्लाहुस्समद लम यलिद वलम यूलद वलम यकुन्लहू कुफ़वन अहद। (अर्थात तुम्हारा क़ौल होना चाहिए कि वह अल्लाह अकेला है अल्लाह सबका मालिक, आवश्यकताओं को पूरा करने वाला है उसके कोई संतान नही है न वह किसी दूसरे की

संतान है न कोई दूसरा उसके बराबर है।)

ज़हेर व इख़फ़ात

सुबह, मग़रिब और इशा की नमाज़ में सूरा आवाज़ से पढ़े जिसको 'ज़हेर' कहते हैं और ज़ोहर व अस्र मे चुपके चुपके जिसका 'इख़फ़ात' कहते हैं यह सिर्फ़ मर्दो क लिए है लेकिन औरतों का सब नमाज़ो को इख़फ़ात के साथ पढ़ना चाहिए।

कुनूत

दूसरी रकात में सूरों के बाद अल्लाहो अकबर कह कर दोनों हाथ अपन चेहरे के सामने रखकर इस तरह कि हथेलियाँ आसमान की तरफ़ हों और कुनूत पढ़े जिसका मतलब है अल्लाह के दरबार में इलतिजा (प्रार्थना) पेश करना। इसके लिए कोई विशेष शब्द नहीं हैं। एक कुनूत के शब्द नीचे दिये जा रहे हैं।

अल्लाहुम्मग़ फ़िरलना वर हमना व आफ़ेना वाफ़ोअन्ना फ़िद्दुनिया वल आख़ेरा इन्नका अला कुल्ले शैईन क़दीर।

अर्थात ऐ अल्लाह हमको क्षमा कर दे हम पर अपनी कृपा कर हमें सलामती दे और हमें माफ़ कर दुनिया और आख़िरत दोनो में यक़ीनन तू हर बात पर क़ाबू रखता है।

यह कुनू इस्लाम की उस शिक्षा को उजागर करता है कि न दीन को भूलें न दुनिया को, दोनों की कामयाबी चाहें।

इसके बाद फिर रुकू करे और सर उठा कर उसी तरह कहे समे अल्लाहो लेमन हमेदा और फिर दोनों सज्दे उसी तरह करे।

तशहूद

दूसरी रकात के सज्दों के बाद सर उठा कर बैठे और अल्लाहो अकबर कहने के बाद तशहूद पढ़े-

"अशहदो अन ला इलाह इल्लल्लाहो वैदहू ला शरीकलह व अशहदो अन्ना मोहम्मदन अब्दहू व रसूलहू अल्ला हुम्मा सल्ले अला मोहम्मदिन व आले मोहम्मद" (अर्थात मैं स्वीकार करता हूँ की मोहम्मद स० उसके बन्दे विशेष और उसके पैग़म्बर/दूत हैं। ऐ अल्लाह दुरूद भेज मोहम्मद व उनके परिवार पर)

सलाम

अगर दो रकात वाली नमाज़ हो जैसे सुब्ह की तो इसी तशहूद के बाद सलाम फेरे जिसके शब्द यह हैं इसमें पहला सलाम मुस्तहब है इसके बाद का वाजिब (अनिवार्य): "अस्सलामो अलैका अय्योहन नबियो व रहमतुल्लाहे व बरकातो। अस्सलामो अलैना व अला इबादिल्लाहिस्सालेहीन। अस्सलामो अलैकुम व रहमतुल्लाह व बरकातहू"। (अर्थात सलाम आप पर ऐ ख़ुदा के रसूल और अल्लाह की रहमत सलाम हम पर और तमाम अल्लाह के ने बन्दों पर। सलाम तुम पर और अल्लाह की रहमत और उसकी बरकतें।)

इस तुम से मतलब नमाज़ जमाअत (पंक्ति) के सब लोग हैं और अकेले नमाज़ पढ़ने मे अल्लाह के सब बन्दे जो इस समय दुनिया में मौजूद हैं।

यह जैसे पहले की गई इल्तिजा (प्रार्थना) के कुबूल होने की अल्लाह की ओर से ख़ुशख़बरी है जो सब को सुना दी जाती है।

तसबीहाते अरबा

अगर नमाज़ तीन रकात वाली हो जैस मग़रिब तो दूसरी रकात में तशहूद पढ़ने के बाद सलाम न पढ़े बल्कि खड़ा हो जाये और या तो सूरह हम्द अकेला पढ़ ले या तीन बार तसबीहाते अरबा पढ़े- "सुब्हान अल्लाहे वलहमदो लिल्लाहे व ला इलाहा इल्लल्लाहो वल्लाहो अकबर" अर्थात अल्लाह हर बुराई, ऐब से दूर है और सब तारीफ़ अल्लाह के लिए है और कोई सच्चा ख़ुदा नहीं सिवा अल्लाह के और अल्लाह सबसे बड़ा है।

इसके बाद अल्लाहो अकबर कह कर रुकू करे, खड़ा हो और पहले की तरह दोनों सज्दे करे और अब तीसरी रकात के बाद फिर तशहूद पढ़े और इसके बाद सलाम फेरे।

अगर नमाज़ चार रकात वाली हो जैसे ज़ोहर, अस्र, इशा तो तीसरी रकात के सज्दों के बाद न तशहूद पढ़े और न सलाम बल्कि "बेहो लिल्लाहे व क़ूव्वतेही अक़ूमों व अक़ऊद" कह कर खड़ा हो जाये और फिर सरे हम्द या तसबीहाते अरबा पढ़े। इसके बाद रुकू और दोनों सज्दे पहले की तरह करे और इसके बाद तशहूद और सलाम पढ़कर नमाज़ समाप्त करे।

ज़िन्दगी का सिस्टम

आयतुल्लाहिलउज़्मा सैय्यिदुलउलमा सै० अली नक़ी नक़वी ताबा सराह

सम्पादनः नूरे हिदायत फ़ाउन्डेशन

क़िस्त-३

अब देखिये वह चीज़ जो इंसान के लिए ज़रूरी है वह क्या है? पहला दर्जा जो है? वह उसूले दीन/धर्म की जड़ें (तौहीद, अदल, नबूवत, इमामत, क़यामत) का समझबूझ के मानना, और कामों में वाजिब को करते रहना और 'हराम' (निषेध) छोड़े रहना। यह वह कम से कम ज्ञान पाना कम से कम दर्जा है जो हर इंसान के लिए ज़रूरी है और किसी को भी इससे छूट नहीं है। इसलिए इतना बिल्कुल वाजिब ज़रूरी होगा यानि हर इंसान पर बालिग़ (प्रौढ़) और समझदार होने के साथ यह फ़र्ज़ कर्त्तव्य होगा कि वह विश्वास वाले मसलों को दलील के साथ वाजिब व हराम के धर्म के हुक्मों को जानता हो और उनको पहचाने।

अब दूसरा दर्जा जो है वह विश्वास की विस्तार से जानकारी, पूरी तशरीह ;म्गचसंपदद्ध के साथ और धर्म मसलों को समझ व दलीलों के साथ जानना जिसका नाम इज्तेहाद (शोध, रिसर्च) है, यह हर इंसान पर वाजिब नहीं है, वरना फिर दुनिया की दूसरी ज़रूरतें पूरी न हो सकती लेकिन अलग-अलग के धर्म मज़हब के ऐतराज़ को दूर करना, और न जानने वाले लोगों को मसलों की सही जानकारी देना, ये काम ऐसे लोगों के होने पर ही निर्भर है, इसलिए एक जमाअ़त वर्ग/(Group) का हर ज़माने में रहना ज़रूरी है, जो ज्ञान के उस दर्जे पर पहुँचे हुए हों, इसलिए उस दर्जे का इल्म हासिल करना वाजिबे किफ़ाई (२) है, यानि सब पर फ़र्ज़ है, लेकिन जब एक या कुछ लोग ऐसे पैदा हो जायें जो इस ज़रूरत को पूरा कर सकते हों तो फिर दूसरों से यह वाजिब हट जाएगा। इसी तरह वह कुछ ज्ञान का हासिल करना जिन पर ज़िंदगी का चक्र टिका है, जैसे चिकित्सा विज्ञान (डॉक्टरी) चूंकि आम तरह रोग को दूर करना इलाज पर निर्भर है, इसलिए ज़रूरत है कि कुछ ऐसे लोग रहें जो इंसान की शारीरिक सेहत की देख रेख कर सकें।

इसी तरह खानपान कपड़े पहनावे और मकान इत्यादि की ज़रूरतों के लिए वह चीज़ें जिनसे जरूरतें पूरी होती है वह ज़रूरत के तहत 'किफ़ाई' हैसियत से आवश्यक हैं।

इसके बाद उन ज्ञान का हासिल करना जिनका मक़सद किसी तरह ख़ुदा के पैदा किए हुए को जायज़ फ़ायदा पहुंचाना हो लेकिन वह जिंदगी की जरूरतों में शामिल न हों तो वह (वान्छनीय) मुस्तहब ठहरेंगे, यानि जब इस इरादे से अंजाम दिये जायें कि इनसे ख़ुदा के पैदाप किए हुए किसी को फ़ायदा मिले तो इन पर पुण्य (सवाब) भी मिलेगा।

बाक़ी रहे ऐसे ज्ञान जिन पर कोई इस तरह का कोई मतलब नहीं है एक देश दूसरे देश की दूरी कितनी है? वहां की जनसंख्या कितनी है? वहां की पैदावार क्या है? वहां की आर्थिक हालत (Economy) कैसी है? वहां राज का सिस्टम (राजतंत्र) क्या है ? वग़ैरह-वग़ैरह। या यह कि आज से इतने सदी पहले कौन बादशाह था? उसकी राजकाल की खासियात क्या थीं? उसके ज़माने में राज की हदें कितनी थीं ? उसके ज़माने में कौन से इन्केलाब़ हुए और क्या-क्या खास हुआ? वग़ैरह-वग़ैरह। इन चीज़ों का जान लेना जायज़ व मुबाह की हद में आयेगा यानि इंसान अपने फ़ालतू वक़्त में इन बातों को भी जान ले तो कोई हर्ज नहीं। यही वह चीज़ है जिसको रसूल (स०) ने फ़रमाया, उस वक़्त जब आप मस्जिद में तशरीफ़ लाये और देखा कि एक शख़्स के चारों तररफ़ लोगों का मजमा है, हज़रत (स०) ने पूछा यह कौन हैं ? लोगों ने कहा "यह अल्लामा हैं"।

आपने फ़रमाया कि *"वमा अल्लामाः"* यह अल्लामा क्या चीज़ हैं ?

लोगों ने कहा कि यह इंसान अरब और अरब इतिहास की लड़ाइयों का जानकार है। हज़रत (स०) ने फ़रमाया - "यह ऐसा इल्म है कि न इससे फ़ायदा

पहुंचता है न नुक़सान"।

देखिये यहां डिक्शनरी (शब्दकोष) की बात रखी गयी है जो इसे ज्ञान (इल्म) यानि जानना" कहां गया? लेकिन इसके बाद फ़रामाते हैं -

ज्ञान तो बस तीन हैं अब यहाँ ज्ञान के परिभाषिक मानी हैं जो शरयी नज़रिए से बयान किये गऐ हैं): एक मोहकम आयातें, (टिकाऊ निशानियां) दूसरे अमिट हदीसें (बातेंः रसूल स०), तीसरे वाजिब (अनिवार्य) हुक्म। फ़रमाते हैं -

"इसके सिवा जो कुछ है वह फ़ाज़िल (अतिरिक्त/अलग की) चीज़ है"।

और अगर ज्ञान ऐसा हो जिससे नुक़सान पहुंचने का डर है या उसका पाप (गुनाह) से लगाव है तो वह निषेध (हराम) होगा, जैसे संगीत ज्ञान (Musical Instruments) क्योंकि इसका ज्ञान कार्य पर निर्भर है (यानि यह जानना गाने बजाने पर टिका है) तो इन मसलों को सीखने के लिए उसे अ़मली तौर पर बजाना ही पड़ेगा तभी उस बाजे को बजाने का इल्म वह सीख पाएगा लेहाज़ा वह हराम होगा। शब्द बोल के रूप में इन बातों का सुनना या जानना हराम नहीं है। जादू का ज्ञान भी हराम है मगर यह जादू की काट के लिए हो तो उस वक़्त जायज़ होगा। तीसरे बहकावों की पुस्तकें यानी झूटें धर्मों की किताबों का ख़रीदना, महफ़ूज़ करना, पढ़ना और छापना या प्रकाशन यह सब मना हैं जब तक कि उसके साथ उनके तोड़ काट झुटलाने के जवाब देने का इरादा न हो, अगर यह इरादा हो तो जायज़ होगा बल्कि किसी हद तक वाजिब होगा ताकि उन शुब्हों (आशंकाओं) और ऐतराजों को दूर किया जा सके और सत्य का साथ देने का फ़र्ज़ पूरा हो सके।

औरतों की शिक्षा (Education of Women):

ज्ञान का मानक (standard) ये मालूम हुआ कि जो ज्ञान काम का हो वह अच्छा है। मगर उपयोगी होना हर चीज़ के लिए उसी के लेहाज़ से होता है, यानि किसी चीज़ का जो मक़सद (Aim) हो और जो उसका ख़ास काम हो, अगर उस से उपयोगी हो तब तो वह उपयोगी समझा जाएगा और अगर इस से फ़ायदेमन्द नहीं है तो बेकार है।

क़ुदरत ने इन्सान की ज़ात को दो लिंगो (Genders) में बॉटा है, मर्द (Male) और औरत (Female) इनकी फ़ितरत की ख़ासियतें (विशेषताऐं) अलग, ज़िन्दगी की ज़रूरतें अलग, फ़र्ज़ और काम अलग। इसलिए ये कैसे हो सकता है कि शिक्षा में इनको एक ही लाइन में जगह दी जाए और दोनों के लिए एक ही तरह की शिक्षा को उपयोगी समझा जाए। बेशक औरत को तरक़्क़ी पाना चाहिए, जिस तरह मर्दो को तरक़्क़ी करना चाहिए, लेकिन मर्द को मर्द रहके तरक़्क़ी करना चाहिए और औरत को औरत रह के। दूसरे शब्दों में यह कहूं कि वह शिक्षा मर्द की होनी चाहिए जिससे वह भरपूर मर्द बन जाए और औरत के लिए ऐसी तालीम जिससे वह 'पूरी औरत' बनें।

ये चाह कि औरतों को अ़मल के मैदान में बिल्कुल मर्दो के कन्धे से कन्धा मिलाकर आना चाहिए, यह उस वक़्त सही हो सकती थी जब मर्द उन कामों में औरत के साथ साझा करने पर तैयार हो जाता जो औरत से जुड़े हैं लेकिन जबकि फ़ितरत ने औरत के लिए कुछ ख़ास काम और फ़र्ज़ रखें हैं जो बिल्कुल उसी के साथ जुड़े हुए है और जिन में किसी तरह मर्द उसके साथ अदल बदल नहीं कर सकता, तो फिर मर्दो के लिए भी कुछ ख़ास काम व फ़र्ज़ होने चाहिएं, जिन में वह औरतों को साझे को न्यौता न दें।

ये भी औरत के स्वभाव का एक कमज़ोर पहलू है कि वह मर्द की बातों में आ जाती है। जिस तरह मर्दो ने उसको रखा उसी को उसने अपने लिए अच्छा समझा। आज जबकि मर्द ही "आज़ादी-आज़ादी" पुकार रहे हैं और ये आवाज़ उठा रहे हैं कि औरतों को तरक़्क़ी के मैदान में बाहर आना चाहिए तो इसे भी औरतें समझ रही हैं कि इसमें भी हमारी भलाई सदभावना है और हमारे लिए यही ठीक है, हालांकि वह देखें तो इसमें साफ़ मर्दो का ख़ुदग़र्ज़ी स्वार्थ उभरेगी। मालूम होगा कि मर्द ज़िन्दगी की कठिनाईयों को पूरा करने से हिम्मत हार चुका, और वह औरत को सिर्फ़ अपनी मदद के लिए बुला रहा है। हांलाकि इस से औरत को ख़ुद कोई फ़ायदा नहीं पहुँचेगा, बल्कि उसकी "नारित्व" (औरतपन) को बहुत नुक़सान पहुंचेगा।

मर्द और औरत के जिस्म की बनावट और इनके अन्दर की जीवन प्रणाली (Phisiology) ही से इनके मकसद से अलग-अलग होना बिल्कुल ज़ाहिर है। फिर जब ये फ़र्क़ अपनी जगह पर बाक़ी है और मिट नहीं सकता, तो बिला वजह इनको खींच कर मर्द के पहलू में लाने से फ़ायदा क्या है। औरत हर हाल में औरत है, और इसके लिए सही शिक्षा वही होगी जो इसको एक तरक़्क़ी पायी (Developed) 'औरत' बना दे, बेशक शिक्षा ज़रूरी है, लेकिन वह उसके लेहाज़ से होनी चाहिए।

जहाँ तक विश्वास से जुड़े मसलों की बात. है तो इसमें मर्द और औरत दोनों एक साथ हैं।

इसी तरह अल्लाह की तरफ़ से जो फ़र्ज़ लागू किए गए है वह जिस तरह मर्दो के लिए हैं उसी तरह औरतों के लिए। इसलिये इन चीज़ों का इल्म जानना जिस तरह मर्दो के लिए ज़रूरी है, उसी तरह औरतों के लिए भी।

बेशक, शरीयत के हुकमों में हो सकता है कि कुछ चीज़ ऐसी हों जिन का ताल्लुक़ औरतों ही से है मर्दो से नहीं, जैसे ख़ास-ख़ास 'तहारत (पाक होने) के मसले या जिन का ताल्लुक़ मर्दों के साथ हो औरतों के साथ नहीं, जैसे 'जेहाद के हुक्म' इस वजह से कि जेहाद औरतों पर नहीं है यानि शरीयत में औरतों के लिए जेहाद का हुक्म नहीं है, इन सब के लिये ऐसे हुक्म को जानने की ज़रूरत नहीं है बल्कि जिसकी जरूरतों से उन हुक्म का ताल्लुक़ है उसी जाति (औरत या मर्द) को उस की जानकारी लेने की ज़रूरत है।

इसके आगे ज्ञान के वह दर्जे हैं जो दुनिया के लिये ज़रूरी हैं। उनमें फ़र्क पैदा होना ही है, क्योंकि मर्द की ज़रूरतें औरत से अलग हैं।

इस्लाम ने औरत और मर्द के बीच घरेलू और बाहर के कामों की हदों को बाँट दिया है। कमाई कजाई और दौड़ धूप मर्द का काम है और घर के इन्तेज़ाम का ताल्लुक़ औरत से है, इसलिए औरत को पहले फ़र्ज़ उन चीज़ों का जानना है जो उसकी ज़रूरतों से जुडी है।

इसी वजह से हदीस में आया है कि "इन्हें कातने और सीने की शिक्षा दो और इन्हें लिखने की न सिखाओ। इस हदीस में सामने से यह लगता है कि औरत के लिए मना है, इसलिए कुछ उलेमा भी फ़तवे देते हैं कि लिखाई इसके लिए मकरूह (वह काम जिसे ना करना अच्छा हो) है मगर ग़ौर करने से पता चलता है कि ऐसा नहीं है।

अब देखिए कि मर्दों के लिए लिखना जिस तरह किसी चीज़ का चाहना या किसी चीज़ के लिये कहना उस चीज़ के वाजिब (ज़रूरी) था मुस्तहब वह काम जिसका करना ज़रूरी न हो कर अच्छा न हो होने का पता देता मगर तभी तक जब उससे पहले मनाही रोक था रोक का शुब्हा ना हो लेकिन अगर पहले किसी काम को रोका जाये फिर कहा जाये कि उस काम को करो तो इसमें मकसद सिर्फ इजाज़त अनुमति होती है कि अब हुक्म हट गया है या कियी चीज़ के बारे में शुब्हा की जगह हो कि वह मना है और फिर उसे करने को कहा जाये तो इसका मतलब होगा कि मना होना का शुब्हा हटा दिया जाय। इसी तरह अगर किसी चीज़ के वाजिब या मुस्तहब होने के हुक्म के बाद उससे मना किया जाय तो वह उसके हराम (निषेध) या मकरूह होने की दलील न होगी बल्कि उससे मकसद यह होगा कि उसका हुक्म अब नहीं है या किसी चीज़ के बारे में वाजिब व मुस्तहेब होने का शुब्हा हो और उसके बारे में मनाही आये तो इससे उसके मुस्तहेब की नहीं होगी और बस सीखने पर बहुत ज़ोर दिया गया है इसीलिये देखने में से यह इस ख़्याल की काफ़ी गुन्जाइश है कि औरतों के लिए भी लिखने की तालीम हासिल करने का हुक्म होगा । इसके साथ कताई और सिलाई का इन के लिए पहले हुक्म दिया गया है, लेहाज़ा इस "इन्हें लिखने की तालीम न दो" के मानी सिर्फ़ इतने होंगे कि इनके लिए लिखने की तालीम का हुक्म उस तरह का नहीं है, जिस तरह कातने और सीने-पिरोने का, या मर्दों के लिए जिस तरह इस पर ज़ोर दिया गया है, उस तरह औरतों के लिए नहीं है। इससे ये नतीज़ा नहीं निकल सकता कि लिखना-पढ़ना इनके लिए हराम या मकरूह है, लेहाज़ा औरतों को तालीम हासिल करने में कोई रोक-टोक नहीं

है। (बस फ़र्क़ ये है कि उन्हें कातने और सीने-पिरोने की तालीम देने पर ज़्यादा ज़ोर दिया गया है)।

ज़रूरी विश्वास और मसलों की जानकारी के अलावा इनको इस हद तक दूसरी जानकारियॉ भी बेहतर है जो ज़िन्दगी के निज़ाम में काम आने वाली हों जैसे - स्वास्थ्य-रक्षा वग़ैरह।

फिर अगर सारी ज़रूरी बातों के पूरा करने के बाद उनके पास खाली वक़्त हो तो दूसरे ज्ञान को लेने में भी कोई रोक-टोक नहीं, मगर ज़रूरत इस बात की है कि औरत की अपनी ख़ास बात (स्त्रित्व की विशेषताएं) बची रहें, यानि औरत, औरत ही रहे। इसकी इजाज़त किसी तरह सही नहीं है कि वह मर्दों के साथ स्कूलों और कालेजों में जाकर मर्दों के कंधे से कंधा मिला कर शिक्षा प्राप्त करें। आज नारी शिक्षा की आवाज़ उठाने वालों की तरफ़ से मिसाल में कहा जाता है जनाब सैयदा (स०) का इल्मी दर्जा कितना ऊंचा था, और जनाबे ज़ैनब (स०) को पेश किया जाता है जिनके बारे में इमाम (अ०) ने फ़रमाया *"आलेमतुन ग़ैरे मुइल्लिमा"* यानी ऐसी जानने वाली जिसकी कोई शिक्षिका नहीं । लेकिन यहॉ इस पर ग़ौर नहीं किया जाता कि जनाब सैयदा(स०) की मालूमात के साधन क्या थे? स्कूल और कालेज तो बहुत दूर है, दुनिया के इतिहास से यह तक साबित नहीं किया जा सकता कि जनाब सैयदा (स०) कभी मस्जिद में अपने पिताजी (अ०) के प्रवचन में जाकर बैठी हों।

बेशक ये रवायत सुनी है कि जब इमाम हसन (अ०) और इमाम हुसैन (अ०) मस्जिद से आते थे तो ज० सय्यदा (स०) अपने बच्चों से अक्सर पूछ लेती थीं कि बाबा ने क्या बयान किया। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि ज० सय्यदा (स०) को इन मालूमात के लेने का शौक़ था और ये भी बिल्कुल ज़ाहिर है कि रसूलल्लाह (स०) को ज० सय्यदा (स०) की उपस्थिति बहुत अज़ीज़ थी मगर फिर कुछ प्रतिबन्ध था, जो न ज० सय्यदा (स०) ने मस्जिद में जाने की कभी ख़्वाहिश की और न रसूल (स०) ने ज० सय्यदा (स०) को इसकी इजाज़त दी। जनाबे सैयदा(स०) ने सदा के लिए, औरतों के लिए एक मिसाल बना दी कि अगर वह शिक्षा लेना चाहती हों तो इसका तरीक़ा ये है कि मर्द और वह खुद अपनी औरतों को घर के अन्दर शिक्षा दें, इसमें बड़े और छोटे का सवाल भी कोई चीज़ नहीं, अगर मौक़ा हो तो माँ अपने बेटे से ज्ञान और जानकारी का फ़ायदा ले सकती है। यह कहा जा सकता है कि शरीयत वाला परदे के लिये औरतों को बुर्क़ा ओढ़कर घर से बाहर निकलने से मना नहीं करता, मगर मालूम होना चाहिए कि ज़रूरत के लेहाज़ से जाएज़ होने की हदें चाहे कुछ हों लेकिन शरीयत का पहला मक़सद औरतों का घर के अन्दर ही रहना है। अगर ऐसा न होता तो औरतों के लिए शरीयत के मसलों में छूट न दी जाती। जुमे की नमाज़ मर्द के लिए वाजिब है लेकिन औरतों पर इसका हुक्म नहीं।

जमाअत (सामूहिक) से नमाज़ की अच्छाई बड़ाई मर्द के साबित, औरतों के लिए नहीं। मर्द के लिए, जमाअ़त के लेहाज़ से मस्जिद की अच्छाई बड़ाई जिससे दर्जे बलन्द होते हैं, इसलिए घर से ज़्यादा सवाब मस्जिद में और मोहल्ले की मस्जिद से ज़्यादा सवाब जामा मस्जिद में, क्योंकि वहाँ ज़्यादा लोग इकट्ठा होते है। मगर औरत के लिए ये हुक्म कि घर के बाहर नमाज़ पढ़ने से ज़्यादा सवाब (पुण्य) घर के अन्दर का, और सहन से ज़्यादा सवाब अन्दर की दालान या कोठरी का।

इससे मालूम होता है कि शरीयत का नज़रिया क्या है? मुझे उन लोगों से जो औरतों की शिक्षा की बातें करते है और परदे के ख़िलाफ़ हैं, इसकी शिकायत नहीं है कि वह ये राय क्यों रखते हैं। हो सकता है इनके दिमाग़ ने यही फ़ैसला किया हो मगर मुझे उनसे इस बात की शिकायत है कि वह इस्लाम की शरीयत की हिदायतों को अपने मिज़ाज के मुताबिक़ ठहराना चाहते हैं, हालांकि ये बिल्कुल ग़लत है। यूँ आप इसको न मानते हों, ये आप का काम है, मगर ये न कहिए कि शरीयत भी हमसे मेल खाए।

माँ-बाप अगर शरीयत पर चलते हैं, तो उन्हें अपनी लड़कियों को चाल-चलन शिष्टाचार सिखाने बताने के साथ ज़रूरी शिक्षा भी जरूर देना चाहिए, मगर इसका ख़याल रहे कि शिक्षा के इनके प्राकृतिक स्वभाव (Natural Instinct) के ख़राब करने का ज़रिआ न हो और इनकी शर्म व लाज की पूँजी जो इनका सबसे बड़ा ज़ेवर है किसी तरह बरबाद न होने पाए।

इबादत की शुरूआती प्रैक्टिस और नमाज़ पर ज़ोरः

जिस तरह बच्चों को शिक्षा का हुक्म दिया गया है और चाल चलन सिखाने की ज़रूरत पर ज़ोर दिया गया है उसी तरह इन्हें इबादत व (भक्ति) और ख़ुदा के कहे पर चलने की आदत डालने पर भी ज़ोर दिया गया है।

छः या सात बरस की उम्र से नमाज़ पढ़ने की आदत डालना चाहिए, इसमें जितना समय बीते और बालिग़ (वयस्क) होने का वक़्त क़रीब आता जाए उतनी ज़्यादा कड़ाई और बल की ज़रूरत है।

इमाम जाफ़र सादिक़ (अ०) की हदीस है, आपसे पूछा गया "वह कौन सी उम्र है जिसमें बच्चे को नमाज़ का नियमित या आदी बनाना चाहिए" - हज़रत (अ०) ने फ़रमाया", सात बरस और छः बरस के बीच"। इस 'बीच' के मानी वही हैं जिन्हें मैने इसके पहले शिक्षा के मसले में बयान किया है कि हक़ीक़त में शरीयत ने इस जगह एक बन्धी टिकी उम्र के बन्धन से काम नहीं लिया है बल्कि उम्र का एक अन्दाज़ा बता दिया है कि लगभग इतनी उम्र (६ और ७ बरस के बीच) में बच्चा आम तौर पर ऐसा हो जाता है कि समझ और सीख सके।

मोहम्मद बिन मुस्लिम की रवायत से इस पर काफ़ी रौशनी पड़ती है, "बच्चे के बारे में इमाम (अ०) से पूछा कि इसे कब नमाज़ पढ़ना चाहिए? फ़रमाया : "जब वह नमाज़ को समझने लगे पूछा" "कब नमाज़ को समझने लगता है और नमाज़ इसके लिए कब साबित होती है?" हज़रत (अ०) ने फ़रमाया, "छः बरस की उम्र में" मालूम होता है कि इसकी कसौटी ये है कि बच्चे में समझ पैदा हो जाए। इमाम जाफ़रे सादिक़ (अ०) की हदीस है :-

"जब बच्चे की उम्र छः बरस हो तो नमाज़ का हुक्म इसके लिए साबित होता है और जब रोज़े की ताक़त हो तो रोज़ा रखने का हुक्म है।"

ऊपर दी हुई रवायत में रावी के सवाल में और इस हदीस में इमाम के जवाब में अरबी में 'वजूब' का शब्द है, जिससे लगता है कि वह वाजिब है। मगर इमामों के शब्दों के छानबीन से ये पता चलता है कि वजूब,(वाजिब होना) तहरीम, (हराम) इसतहबाब,(मुस्तहब) कराहत (मकरूह) और एबाहत (मुबाह होना यानी शरीयत में उस काम के करने या न करने के बारे में कुछ नहीं कहा गया है) के पारिभाषिक शब्द के रूप में जो माने हैं वह इल्में फ़िक़्ह (धर्म विधिशास्त्र) के जमा करने वाले फ़क़ीहों (धर्म विधि शास्त्रियों) के बीच दिये गये हैं।

इसके पहले क़ुर्आन व हदीस में ज़्यादातर ये ;क्पबजपवदंतल /शब्दकोशों के मानी में इस्तेमाल होते थे, इसलिए वाजिब का मतलब मुस्तहब से लेना और मुस्तहब का से।

इसी तरह हराम व मकरूह के शब्द एक दूसरे के मानों में अक्सर इस्तेमाल होते हैं, ये जगह और बाहरी दलीलों से पता लगता है कि पारिभाषिक रूप से वाजिब या मुस्तहब है।

लगातार हदीसें इस बात के सुबूत में मौजूद हैं कि बच्चा जब तक बालिग़ न हो उस वक़्त तक शरीयत के आदेश उस पर लागू नहीं होते और बालिग़ होने की सीमा भी तय कर दी गई है कि वह पन्द्रह बरस है इसलिए इन हदीसों में मुस्तहब होना समझना चाहिये, हालांकि इसको कहीं वाजिब के मतलब से लिया गया है।

इमाम मो० बाक़िर(अ०) की हदीस में है :-

इरशाद होता है कि "हम लोग (मासूम (निष्पाप) अहलेबैत (अ०)) अपने बच्चों को नमाज़ पढ़ने का हुक्म देते हैं, जब वह पाँच बरस के हों इसीलिये तुम लोग (कम से कम) अपने बच्चों को नमाज़ के लिए हुक्म दो जब वह सात बरस के हों।"

ये बात उस उसूल की बुनियाद पर है कि जो लोग मज़हब के रास्ता दिखाने वाले, (मार्ग दर्शक) हों उनको ज़रूरत है कि वह मज़हबी हुक्म की तरफ़ उस से ज़्यादा तवज्जो करें, जितना कि आम लोगों से कहते हैं। इस हदीस का लहजा "मुस्तहब" को साफ़ बताता है, इसलिए कि वाजिब में शरीयत की ओर से धार्मिक बन्धन (निश्चित समय-सीमा की पाबन्दी) होता है और उसका हुक्म सबके लिए आम (एक जैसा) होता है, उसमें व्यापकता/Generalization होती है। यह फ़र्क़ करना और इस तरह अपने यहाँ की मिसाल करने का न्यौता

देना, इस बात से 'मुस्तहब' होना ज़्यादा मुनासिब लगता है।

अब उलेमा की राय अलग अलग है कि ये बच्चे जो नमाज़-रोज़े वग़ैरह करता है क्या ये इबादत (भक्ति) की हैसियत रखते हैं? यानि इसको उन कामों का सवाब मिलेगा? या उन बच्चों के इन कामों की हैसियत बस मश्क़ या PT जैसी है? इसी वजह से ये आम तौर से मशहूर हो गया है कि जो बच्चा नमाज़ पढ़ता है उसका सवाब इसे नहीं होता बल्कि माँ-बाप को होता है।

इस बात की बुनियाद उसी हुक्म पर है कि जब ये कोई इबादत नहीं है और सिर्फ़ प्रैक्टिस है तो ये ज़ाहिर है कि प्रैक्टिस कराने का लगाव माँ-बाप से है, इसीलिए उन्हीं को इसका सवाब भी होगा।

लेकिन मेरी नज़र में इस मसले में एक आम नियम या Formula की तरह कोई फ़ैसला करना सही नहीं है, बल्कि इसकी सूरते अलग-अलग होती हैं -

एक सूरत तो ये है कि बच्चे को इतना एहसास अभी पैदा नहीं हुआ है कि वह नमाज़ को ख़ुदा का हुक्म समझ कर उसी इरादे से पढ़े। लेकिन माँ बाप इबादत का शौक़ पैदा करने के लिए इस को नमाज़ पढ़ने को कहें या वह एक शरीर, उधमी और बुरा लड़का है और ये समझते हुये कि ये ख़ुदा का एक हुक्म है और अच्छी बात है लेकिन फिर भी अगर माँ बाप इस को मजबूर करें तो वह नमाज़ नहीं पढ़ेगा। वह नमाज़ पढ़ता है सिर्फ़ माँ-बाप की ज़बरदस्ती से और उनके डर के मारे, इसलिए वह अक्सर माँ-बाप को झाँसे में भी ले लेता है और नमाज़ को उड़ा देता है, ऐसी सूरत में बेशक ये काम इबादत नहीं है, इसलिए कि ख़ुदा के पास पंहुचने का मन इबादत का असली सूत्र है, वह उसमें मौजूद नहीं, ऐसा काम अगर कोई बालिग़ और समझवाला इन्सान करे तो वह काम भी क़ुबूल करने के क़ाबिल नहीं होगा। इस काम को करने का सेहरा सिर्फ़ माँ-बाप के सर है जो आदत डालने के लिए बच्चे को उसके करने पर मजबूर करते हैं। वह बेशक उसकी आने वाली जिन्दगी के लिए फ़ायदेमन्द है, इसलिए कि इस ज़रिये से एक वक़्त में इसको अपने फ़र्ज़ का एहसास भी पैदा हो सकता है, और वह सही तरीक़े से इबादत को अन्जाम देने लगे, इसलिए इस वक़्त नमाज़, रोज़े के करने का सवाब उन्हीं माँ-बाप को मिलना चाहिए।

दूसरी सूरत ये है कि बच्चे में ख़ुद इबादत का शौक़ है तथा उसे चाव और रूचि है कि वह उस काम को जो ख़ुदा की तरफ़ से उसके बन्दों पर लागू हुआ है, उसे करे । यहाँ तक कि हो सकता है कभी माँ बाप रोकते भी हों कि रोज़ा न रखो या नमाज़ न पढ़ो तो वह बच्चा नहीं मानता और उसे बेचैनी पैदा होती है कि किसी तरह वह उस इबादत को कर डाले। ऐसे बच्चे जो आमाल करते है बेशक उसके सवाब का उन्हीं को हक़ है। बालिग़ होने की उम्र निश्चित किया जाना ख़ुदा की तरफ़ से एक मेहरबानी है जिसकी वजह से १५ बरस तक इन्सान शरीयत के हुक्मों से आज़ाद रखा गया है, वरना अक़्ली हैसियत से अक्सर बच्चे इसके बहुत पहले इस क़ाबिल हो जाते हैं कि उन पर पाबन्दियाँ लागू की जा सकें। १५ बरस तक आज़ाद रखना सिर्फ़ एहसान है और कुछ नहीं लेकिन मेहरबानी व एहसान उसी वक़्त तक आभार है जब तक वह किसी हैसियत से मेहरबानी के ख़िलाफ़ न हो। यहाँ एहसान का मतलब सिर्फ़ ये है कि बालिग़ होने के पहले इन्सान को गुनाहों की सज़ा से छूट दी जाए, लेकिन अगर वह इबादत और उसके आदेशों के पालन करने का सही एहसास रखते हैं और उसकी बरकतों से फ़ायदा उठाना चाहते हैं तो उन्हें इन बरकतों से रोके रखना और वन्चित करना और उसके सवाब से वन्चित रखना बिल्कुल मेहरबानी और एहसान के ख़िलाफ़ है, बच्चों के खाते में सवाब गुनाह न लिखे जाने के बारे में सटीक हुक्म इसको बिल्कुल ही नहीं बताते, बेशक इस सूरत में अगर माँ-बाप इबादत के लिए रिझाते हैं और इससे बच्चे में इबादत भक्ति और कर्मभाव व अ़मल का जज़्बा पैदा होता है, तो जिस तरह बच्चे को उसके कर्म करने का सवाब पाने का हक़ है, उसी तरह उन माँ-बाप को रिझाने, लुभाने और प्रेरित करने के लिए सवाब मिलना चाहिए, जिस तरह अगर किसी समझदार जवान या बूढ़े को इबादत की दावत दी जाए तो उनके अच्छे कार्यों का सवाब करने वाले को भी है और उसके लिए प्रेरित करने वाले को भी सवाब।

इसके माने ये हुए कि वाजिब कार्यों के बच्चों पर ज़रूरी नही है उन्हें इससे छूट है लेकिन मुस्तहब का दर्जा उनके लिए भी साबित है। जो मुस्तहब काम आम लोगों के लिए हैं वह बच्चों के लिए भी हैं और इनसे बच्चों छूट को देने की कोई वजह नहीं है।

लड़कियों की शिक्षा-दीक्षा के ख़ास उसूलः

बच्चों की शिक्षा-दीक्षा में जिस उसूल से इन को इबादत व भक्ति आदत डालने का हुक्म है, उसी उसूल से लड़कियों की शिक्षा में कुछ बातों पर ख़ास ध्यान करने की ज़रूरत है जो उनके चाल चलन को सुधारने के लिए बहुत ही ज़रूरी हैं। लड़कियों को उनके आने वाले दिनो में एक ख़ास तरह का जीवन बिताना होता है और शरीयत के हुक्म से उनके लिए परदा ज़रूरी होगा, इसलिए उनको कमसिनी से परदे करते रहने के लिए तैयार किया जाए। उन घरानों की बात नहीं करता और उन लोगों से बहस नहीं जिनके यहाँ अब औरतों के लिए परदा कोई चीज़ ही नहीं रहा मगर वह शरीफ़ घराने जहाँ अब भी परदे की कुछ अहमियत बची है, उनको इस बात का ख़याल रखने की ज़रूरत है कि लड़कियों के बचपने में उन्हें उस तरह आज़ाद न रखा जाए, जिस तरह लड़के आज़ाद रहते है।

बहुत देखा गया है कि लड़कियों को बालिग़/व्यस्क होने के वक़्त तक बाहर निकलने और लड़कों के साथ खेलने की इजाज़त रहती है, बल्कि कभी-कभी शरीरयत के हिसाब से बालिग़ होने के वक़्त तक यानि ६ बरस पूरे भी हो जाते हैं मगर उसे अभी बच्चा समझा जाता है और परदे का कोई ख़याल नहीं किया जाता है। उन लोगों को ये समझना चाहिए कि लड़की मानव है और कमज़ोर है। उस के स्वभाव में असर लेने का काफ़ी गुन होता है । अगर बचपन में उसे तफ़रीह की जगहों पर जाने का चस्का, बाग़ों की सैर का शौक़ और दुनिया के तमाश देखने का मज़ा मिल गया, तो बालिग़ होने या आपके हिसाब से जवानी का ज़माना आते ही उसके पैर एक दम से बान्धना और परदे के अन्दर क़ैद करना इसकी फ़ितरत के ऊपर एक ऐसा ज़बरदस्त दबाव होगा जिसे वह मुश्किल से सह पायेगी। अगर सच में आपको उसे आने वाले दिनों में परदा कराना है तो उस के लिए आप को पहले से उसके स्वभाव को आदी करना चाहिए। उसका तरीक़ा वही है कि इस वक़्त की बात नहीं हैं बल्कि जब भी उस में समझ पैदा हो तभी से उसे ये एहसास पैदा कराइये कि वह "लड़की" है, और उसे लड़की की तरह ही रहना चाहिए। इस में सूझबूझ के साथ धीरे धीरे दर्जा-दर्जा (Gradually) से करना चाहिए, और जब वह छः-सात साल की हो जाए तो उसे पूरी तरह परदे का आदी बना देना चाहिए। इस तरह उसके स्वभाव को उस सांचे में ढालना चाहिए कि उसे "सैर और तमाशे" का चस्का ही पैदा न हो। अजनबी लड़कों के साथ समझदार लड़कियों का खेलने देना किसी तरह अच्छा नहीं है। वह बचपने में साथ खेलने की चाह, प्यार ही एक वक़्त में दूसरा रूप ले सकती है जिस पर माँ बाप को बाद में पछतावा व अफ़सोस होगा। अक्सर बच्चों से जो कहानियाँ कही जाती हैं, उन में इश्क़ व मोहब्बत का बयान होता है। ये चीज़ लड़कियों के लिए ख़ास तौर से नुक़्सानवाली है। उन से जो कहानियां कही जाती हैं उन में अगर सच्चाई, ईमानदारी, विश्वास इत्यादि का सबक़ मिलता हो तब तो बहुत अच्छा है, और नहीं तो कम से कम ऐसी बातें तो नहीं होनी चाहिऐ, जो उनके दिमाग़ को बुरे ख़यालों का अड्डा बना दें। मैं तो लड़कियों से ऐसी कहानियाँ कहने का भी क़ायल नहीं हूँ, जिनमें पाक आंचल, औरों की इज़्जत का बयान हो, जैसे बादशाह, काज़ी (न्यायाधीश) और उसकी बीवी की कहानी जो अक्सर पुरानी किताबों में मिलती है, और शायरों ने उस पर कविताऐं की है। क्योंकि इस तरह की कहानियों में भी मर्द व औरत के रिश्तों की बात इस तरह जरूर होती है, जिससे मेरी राय में छोटी लड़कियों के दिमाग़ दिमाग़ का बिल्कुल कोरा रहना ही बेहतर है न कि वह कहानियां जिन में नाजएज़ ताल्लुक़ और मिलन व विरह की झूठी कहानियों का बयान हो।

मेरी नज़र में लड़कियों की शिक्षा और पालने की जो कसौटी है वह तो इतनी मुश्किल है कि शायद आज के समाजी सिस्टम में उस पर चला ही नहीं जा सकता है।

लड़की के सामने ज़्यादा शादी की बात करना, जैसे अक्सर दिलचस्पी के लिये उस के घूँघट निकाल देते

हैं, कहते हैं लो, 'दुल्हन बैठी है' या उस को शर्म लाज्जा दिलाने के लिए चाहे न चाहे उसके के सामने शादी का नाम लेते हैं, ये चीज़े वह है जो उसके दिमाग़ में ये ख़्याल पैदा करती हैं कि शादी एक ख़ास चीज़ है, जिस में कुछ ख़ास मज़ा छिपा है, उस का नतीजा ये होता है कि वह उस वक़्त का इन्तेज़ार करने लगती है और उसके बाद अगर उसमें देर होने लगती है तो उस का नतीजा कुछ अच्छा नहीं हो सकता। एक सीधी साधी लड़की जिस में प्यास है ही नहीं यानी उसमें किसी चीज़ का शौक़ व आरजू मौजूद नहीं है, उसे सिर्फ़ अच्छे लगने वाले बयानों से 'प्यासा' बना दिया जाता है, फ़िर जिस वक़्त उस को सच्ची प्यास होगी तो आप ही उसके मक़्सद को पा लेने में देर भी करेंगे,बेशक अब इसमें जो कुछ भी बुरे नतीजे पैदा हो जाएं वह कम हैं। कुछ चीज़ें ऐसी है कि जिनसे सीधे तो नही मगर किसी तरह शादी की चाहत मज़बूत हो जाती है जबकि उन ज़रियों को अपनाने का मक़सद तो नेक था, मगर मेरे नज़दीक उसका तरीक़ा अच्छा नहीं अपनाया गया।

अक्सर घरानों में बहुत सी चीज़े ऐसी हैं जो कुवांरी लड़कियों के लिए मना है, जैसे मिस्सी लगाना, उल्टे बाल बनाना, इत्र लगाना, हार-फूल पहनना, पायचेदार पैजामा पहनना वग़ैरह-वगैरह जब लड़की इन कामों को करना चाहती है तो उसे यह कह कर रोक दिया जाता है कि तुम्हारी अभी शादी नहीं हुई है तुमको अभी ये सब नहीं करना चाहिए तो अब इसका नतीजा ये होता है कि लड़की को शादी की चाहत पैदा हो जाती है। ये चाहत इसलिए नहीं कि वह शादी की असल और सच्चाई को जान गयी है, बल्कि इसलिए कि शादी हो तो हमें भी ये सब साज-सिंगार की इजाज़त मिले। सच में इस रीति की बुनियाद उस सोच पर थी कि हुस्न सौन्दर्य को सजाना सवाँरना ख़ुद को दिखाना है, अगर लड़की सजी-सँवरी होगी सिंगार किये होगी तो अपने आप उसके दिमाग़ में इस तरह का ख़याल पैदा होगा कि उसको देखने वाला (कोई) होना चाहिए। लेकिन अगर वह साज सिंगार से अलग रहे तो उस के दिमाग़ में ये ख़याल पैदा ही नहीं होगा, लेकिन इस मक़्सद के लिए ऐसे तरीक़ों की, ज़रूरत थी कि लड़की के दिल में साज सिंगार की चाह पैदा ही न हो। शिक्षा के उसूल से इस का सही तरीक़ा ये था कि जब से लड़की ज़रा समझदार हो तो उस की माँ, बड़ी बहनें और दूसरी बड़ी औरतें जो घर में रहती हों वे ख़ुद अपने आप को सजाना-सवाँरना कम कर दें जिससे लड़की भी इसी माहौल में पले, यह नहीं कि जब किसी शादी-ब्याह में जाने लगें तो जितनी घर की औरते हैं, सबने अच्छे से अच्छे तरीक़े से अपने आप को सजा-संवार लिया और हुस्न को सवाँरने के लिए ज़रूरत के जितने समान हैं वह सब इकट्ठा कर लिया हो, सिर्फ़ एक ये ''गुनहगार'' बिन ब्याही लड़की रह गयी जो सबसे अलग बनाव की है। यह चाहती है कि उसी तरह यह भी सजे-सँवरे, तो उससे यह कह दिया जाता है कि नहीं - ख़बरदार! तुम्हारी अभी शादी नहीं हुई है, तुम को अभी हक़ नहीं। अब न पूछिये कि उसके दिल पर क्या बीतेगी और उसे किस तरह अपनी दूसरी साथी औरतों को देख कर ये चाहेगी कि कहीं मैं भी इसी तरह सजती-सवँरती। इस तरह वह चाहे अनचाहे शादी के वक़्त का रास्ता देखने लगती है।

ये कुछ बुरा नहीं था अगर आप इस बारे में शरीयत के हुक्म पर चलते। वहाँ ये हुक्म है कि लड़की की शादी बहुत जल्दी करो। यहाँ तक कि अगर वह अपने शौहर पति (दूल्हा) के घर में ही बालिग़ हो तो बहुत अच्छा है, मगर यहां तो लड़कियाँ अक्सर २०-२५ साल तक बिठाए रखी जाती हैं, क्योंकि आपका मन चाहा वर नहीं मिलता, और अक्सर लड़कियों के ''जीवन का बसन्त'' इसी तरह 'पतझड़ हो जाता है, यानि ज़िन्दगी बेरौनक़ हो जाती है और वह सच में जीते जी क़ब्र में चली जाती है। इस तरीक़े के साथ फिर वह बड़ी चोट देने और मार डालने वाला है। और क्या मालूम कि जो बुरे हादसे सामने आते है, इनमें कहाँ-कहाँ माँ बाप ही का तौर-तरीक़ा उनकी वजह होता है, जिसकी ख़राब सूरतें सामने आती हैं।

(..... जारी)

मुख्य समाचार

नूरे हिदायद फ़ाउण्डेशन में यौमे ख़ुमैनी[रह०]

४ जून २०१२ ई० को रहबरे इन्क़ेलाबे इस्लामी ईरान आयतुल्लाहिल उज़्मा रुहुल्लाह ख़ुमैनी[रह०] की तेईसवीं बरसी के मौक़े पर नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन के दफ़्तर स्थित इमामबाड़ा ग़ुफ़रानमआब में यौमे इमाम ख़ुमैनी[रह०] मनाया गया इस मौक़े पर मुख़्तलिफ़ उलमा, उदबा और शोअरा ने अपने अपने अन्दाज़ में इमाम ख़ुमैनी की ज़िन्दगी के मुख़्तलिफ़ पहलुओं का तज़किरा किया। जल्से की इख़्तेतामी तक़रीर असीफ़ जायसी सम्पादक मासिक शुआ-ए-अमल ने की। उन्होंने तक़रीर में कहा कि आज दुनिया के मुसलमानों का सर दुनियां में जितना भी ऊँचा है वह सिर्फ़ और सिर्फ़ इमाम ख़ुमैनी[रह०] के ज़रिये लाए हुए इन्क़ेलाबे इस्लामी ईरान का सदक़ा है। आख़िर में इमाम ख़ुमैनी[रह०] और दीगर शोहदा-ए-इन्क़ेलाबे इस्लामी के ईसाल के लिए फ़ातेहा ख़्वानी की गई।

हज़रत ग़ुफ़रानमआब[रह०] का देसा

१३ रजब १४३३ हि० मुताबिक़ ३ जून २०१२ ई० को नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन में "शिया नेशन डे" मनाया गया। जिसमें मज़ामीन निगार हज़रात और शोअरा-ए-कराम ने मदहे अमीरुल मोमनीन हज़रत अली-ए-मुर्तज़ा अलैहिस्सलातो वस्सलाम के बाद ग़ुफ़रानमआब[रह०] के कारनामों ख़ुसूसन हिन्दोस्तान में शियों की पहली नमाज़े जमाअत १३ रजब १२०० हि० और पहली नमाज़े जुमा २७ रजब १२०० हि० के क़याम का ज़िक्र किया। वाज़ेह रहे कि १३ रजब सन! १२०० हि० से ही हज़रत ग़ुफ़रानमआब[रह०] ने हिन्दोस्तान में बहैसियत क़ौम मनवाने की तहरीक शुरू की थी। मक़ाला निगार हज़रात ने हम्दे परवरदीगार व नआत सरवरे कायनात स० के बाद ग़ैर मुन्क़सम हिन्दोस्तान में ग़ुफ़रानमआब का पहली बार नमाज़े जुमा के क़ायम करने का मोहक़्क़ाना अन्दाज़ में तज़किरा किया।

ग़ुफ़रानमआब[रह०] की तहरीक

१. अपने अक़ाएद समझो। २. अपने मज़हबी आमाल बजा लाओ। ३. अपनी मज़हबी हैसियत के इज़हार में तामिल न करो। ये ऐसी तहरीक है जिसे हर वक़्त ज़िन्दा रखने की ज़रूरत है और इसी तहरीक ने हिन्दुस्तान में शियों के वजूद को ज़ाहिर किया। बेहतर है कि हम सब १३ रजब को थोड़े ही वक़्त के लिए "शिया नेशन डे" मनायें और इस तहरीक को ज़िन्दा करें। गुफ़रानमआब[रह०] की तहरीक में दूसरे मज़ाहिब से तख़ातिब नहीं था आज भी इसी तरह तहरीक को चलाने की ज़रूरत है।

मौलाना सैय्यद मोहम्मद शाकिर नक़वी अमरोहवी की रेहलत

१३ शाबान सन १४३३हि० मुताबिक़ ४ जुलाई २०१२ को आयतुल्लाह-उल-उज़्मा सैय्यद-उल-उलमा मौलाना सैय्यद अली नक़ी नक़वी ताबसराह के होनहार शार्गिद आलिम बाअमल मौलाना सैय्यद मोहम्मद शाकिर नक़वी साहब उस्ताद जामिया नाज़मिया लखनऊ ने तवील अलालत के बाद इस दारे फ़ानी से दारे बक़ा की जानिब रेहलत फ़रमाई मौलाना कई दिनों से शदीद बीमार थे और एराज़ मेडिकल कालेज लखनऊ में ज़ेरे इलाज थे। आपका जनाज़ा आपके वतन अमरोहा ले जाया गया और दूसरे दिन आपके आबाई इमाम बारगाह में सुपुर्दे ख़ाक किया गया। आपका चालीसवाँ २६ अगस्त को अमरोहा में होगा इस मौक़े पर मुफ़क्किरे इस्लाम डाक्टर मौलाना कल्बे सादिक़ साहब क़िब्ला मजलिस को ख़िताब फ़रमायेंगे। इदारा मरहूम के इन्तिक़ाल पर गहरे रंज व ग़म का इज़हार करता है और दुआगो है कि अल्लाह तआला बतुफ़ैल मोहम्मद व आले मोहम्मद अ० मरहूम को जवारे मासूमीन में जगह इनायत फ़रमायें और मौलाना के पसमान्दगान को सब्रे जमील अता फ़रमाये।

हज़रत ग़ुफ़रानमआब[रह०] का देसा

१६ रजब १४३३ हि० मुताबिक़ १ जून २०१२ ई० यानी हज़रत ग़ुफ़रानमआब की तारीख़े वफ़ात पर मुजद्दिदे मिल्लत आयतुल्लाहिल उज़्मा सै० दिलदार अली नक़वी ग़ुफ़रानमआब (मुतवफ़्फ़ी १२३५ हि०) के ईसाले सवाब के लिए मजलिसे अज़ा-ए-सैय्यदुश्शोहदा[अ०], ख़ुद ग़ुफ़रानमआब[र०अ०] के तामीर कराए हुए इमामबाड़े में हुई। जिसे मौलाना सै० तक़ी रज़ा साहब ने ख़िताब फ़रमाया। मजलिस में बड़ी तादाद में मोमिनीन ने शिरकत की और मजलिस के आख़िर में हज़रत ग़ुफ़रानमआब[र०अ०] की तरफ़ से मोमिनीन के लिए खाने का इन्तिज़ाम भी किया गया।

ईरान ने समुन्द्री हदफ़ की जानिब ख़लीजे फ़ारिस मीज़ाईल फ़ायर किया

५ जुलाई २०१२ को इस्लामी जम्हूरिया ईरान ने पैग़म्बरे आज़म ७ मीज़ाईल मशक़ों से आख़िरी मरहले में ख़लीजे फारस में मीज़ाईल को समन्दरी हदफ़ की जानिब कामयाबी के साथ फ़ायर किया। रिर्पोट के मुताबिक़ ईरान ने मुख़्तलिफ़ क़िस्मों के तवील और क़रीब के फ़ासले तक मारने वाले मीज़ाईलों को फ़ायर किया था और उसके बाद ईरानी जंगी जहाज़ों और बग़ैर पायलट के जहाज़ों ने दुश्मन के फ़र्ज़ी ठिकानों पर बमबारी की। वाज़ेह रहे कि सिपाह पासदाराने इन्क़ेलाबे इस्लामी की फ़िज़ाईया के कमान्डर मेजर जनरल अमीर अली हाजी ज़ादह ने कहा था कि पैग़म्बरे आज़म[स०] ७ नामी १३०० किलोमीटर, ३०० किमी,५०० किमी और ८०० किलोमीटर के फ़ासले तक मार करने वाले मीज़ाईलों से इस्तेफ़ादा किया गया है जबकि हमारे पास २००० किमी के फ़ासले तक मार करने वाले मीज़ाईल भी मौजूद हैं।

उन्होंने पैग़म्बरे आज़म[स०] ६ नामी मशक़ों और पैग़म्बरे आज़म[स०] ७ नामी मशक़ों को फ़र्क़ को वाज़ेह करते हुए कहा कि पैग़म्बरे आज़म[स०] ६ नामी मशक़ों में एक मुश्तरका नुक़्ते से तवील फ़ासले, दरमियाना फ़ासले और क़रीब के फ़ासले तक मीज़ाईलों को एक ही हदफ़ पर फ़ायर किया गया था। लेकिन पैग़म्बरे आज़म[स०] ७ नामी मशक़ों में मुल्क के मुख़्तलिफ़ गोशों से मुख़्तलिफ़ मीज़ाईलों को एक ही हदफ़ की तरफ़ फ़ायर किया गया है। उन्होंने कहा कि मीज़ाईल हदफ़ पर फ़ायर करने के बाद सिपाह के जंगी जहाज़ों ने दुश्मन के ठिकानों पर बमबारी की और उसके बाद बग़ैर पायलट के जहाज़ों ने दुश्मन के ठिकानों को निशाना बनाया।

ग़ासिब यहूदियों के जत्थे का मस्जिदे अक़्सा पर धावा

११ जुलाई सन् २०१२ को फ़िलस्तीनी सर ज़मीन पर क़ाबिज़ यहूदियों के एक इन्तिहा पसन्द जत्थे ने इस्राईली सिक्योरिटी फ़ोर्सेज़ की निगरानी में क़िब्ला-ए-अव्वल मस्जिदे अक़्सा पर धावा बोल दिया। ग़ासिब यहूदियों का ये गिरोह मस्जिद की राह दारियों में दनदनाता रहा। हमलावर हाथों में कैमरे और दुरबीन लिए हुए थे। इस्राईली फ़ौजी अहलकारों और ग़ासिब यहूदियों की जानिब से मस्जिदे अक़्सा की बेहुरमती पर मस्जिद में मौजूद नमाज़ी शदीद मुश्ताल हुए। मरकज़े इत्तिलाते फ़िलस्तीन के मुताबिक़ अल-क़ुद्स मीडिया मरकज़ ने वाज़ेह किया कि इन्तिहा पसन्द यहूदियों ने मस्जिद के मराकशी दरवाज़े से मिले हुए इस्लामी म्यूज़ियम का दौरा भी किया। ज़राये ने बताया कि इन्तिहा पसन्द यहूदी जत्थे में कम अज़ कम बीस अफ़राद शामिल थे जिनकी हिफ़ाज़त के लिए इस्राईली फ़ौजी अहलकारों की बड़ी तादाद भी क़िब्ला-ए-अव्वल की बेहुरमती में शरीक रही।

आबनाए हरम्ज़ की बन्दिश का मन्सूबा तैयार

१७ जुलाई सन् २०१२ को ईरानी मसलेह अफ़वाज के चेयरमैन ज्वाईंट चीफ़स ऑफ़ स्टाफ़ जनरल हसन फ़ीरोज़ाबादी ने कहा कि आबनाए हरमज़ की बन्दिश से मुताल्लिक़ कोई भी फ़ैसला रहबरे मुअज़्ज़म आयतुल्लाह सै० ख़ामनाई मदज़िल्लहू करेंगे। ईरान की नीम सरकारी ख़बर रिसाँ एजेन्सी फ़ारस के मुताबिक़ जनरल फ़ीरोज़ाबादी ने एक बयान में कहा कि इस अहम आबी गुज़रगाह की बन्दिश के लिए हंगामी मन्सूबा तैयार कर लिया गया है लेकिन इस के बारे में हतमी फ़ैसला मसलेह अफ़वाज के आला कमान्डर की हैसियत से सै० अली ख़ामनाई ही करेंगे। दूसरी जानिब अमरीका ने ईरान की जानिब से आबनाए हरमज़ को बन्द करने की धमकियों के बाद खलीज में अपनी फ़ौजी मौजूदगी में इज़ाफ़ा कर दिया है। ईरानी बहरिया के कमान्डर रेयर एडमिरल हबीबुल्लाह सियारी ने कहा कि ख़ित्ते की सलामती का दारोमदार ईरान पर है। पीर को तेहरान में सिक्योरिटी कान्फ़्रेंस के मौक़े पर सहाफ़ियों से गुफ़्तगू करते हुए उन्होंने कहा कि इस्लामी जम्हूरिया ईरान की मौजूदगी में ख़ित्ते की सिक्योरिटी पर कोई आँच नहीं आने देगें। ईरानी बहरिया के कमाण्डर की तरफ़ से ये बयान ईरान के आबनाए हरमज़ के बन्द करने की धमकी पर अमरीकी वारनिंग के रद्दे अमल पर सामने आया है। दुनिया की ज़्यादा तर तेल की बरामदात आबनाए हरमज़ के ज़रिये होती है।